Research maGma
An International Multidisciplinary Journal

ISSN- 2456-7078 IMPACT FACTOR- 4.520

VOL-1, ISSUE-12, Feb-2018

हाशिये का समाज और चौथीराम यादव की आलोचना

अनीश कुमार
पी-एच.डी. शोध छात्र, हिन्दी विभाग सांची बौद्ध भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय
बारला, सांची, रायसेन, मध्य प्रदेश

किसी भी देश या समाज के उन वर्गों–समुदायों के सम्मिलित समाज को हाशिये का समाज कहा गया है, जो वर्चस्ववादी कुनबे की तुलना में सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक और आर्थिक स्तर पर किन्हीं कारणों से पीछे रह गए हैं। इस परिभाषा को समझने से पहले 'हाशिये' शब्द पर थोड़ा विचार करना जरूरी हो जाता है। उदाहरणस्वरूप किसी पृष्ठ में हस्तलेखन या टंकण करने से पूर्व शीर्ष पर और मुख्य रूप से बाईं ओर कुछ जगह छोड़ी जाती है । अमूमन इस जगह को 'हाशिया' कहा जाता है। जबकि मुख्य विषय उसके आगे रहता है । उसी प्रकार समाज में कुछ जातियों या समुदायों को मुख्य धारा से अलग कर दिया गया है । प्रश्न उठता है कि हाशिये का समाज, समग्र समाज के लिए कितना महत्त्वपूर्ण है और उसे शीर्ष का समाज कहना चाहिए या एक ओर छोड़े गए हाशिये का समाज? भारतीय राष्ट्र के संदर्भ में विचार करें तो हाशिये के समाज में निस्संदेह आधी मानवता के रूप में महिलाएं होंगी। इससे इतर स्त्री–पुरुष को साथ–साथ देखता हुआ दलित, आदिवासी और अन्य पिछड़ा वर्ग और अल्पसंख्यक वर्ग हाशिये के समाज में शामिल माने जाएंगे।

वर्तमान भारतीय परिवेश में स्त्री, दलित, आदिवासी, किसान, मजदूर और अल्पसंख्यक (मुख्यतः मुस्लिम समाज) आदि सभी हाशिये पर हैं। आदिवासी चिंतक हरिराम मीणा ने हाशिये के समाज को परिभाषित करते हुए लिखा है कि "किसी भी राष्ट्र, समाज के उन घटकों के मानव समुदाय के सम्मिलित समाज को हाशिए का समाज कहा गया है, जो समाज के अगुवा तबके की तुलना में सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक स्तर पर किन्हीं कारणों से पीछे रह गया है।"1

चौथीराम यादव हिन्दी के आलोचना जगत में एक नई जमीन तैयार करते हैं । एक पत्रिका को दिये साक्षात्कार में बहुत निर्भीकता के साथ कहते हैं कि "हाशिये के समाज से प्रायः तात्पर्य दलित समाज है, पिछड़ा समाज है, आदिवासी समाज है, किसान, मजदूर यही सब तो है हाशिये का समाज। मुझे लगता है कि जिन्हें हाशिये का समाज कहा जाता है, वे बहुसंख्यक समाज हैं और आबादी का हिसाब से बहुसंख्यक समाज होने के नाते मुख्यधारा का समाज है। लेकिन तमाम आर्थिक संसाधनों और शिक्षा से वंचित करके इन्हें हाशिये पर ढकेल दिया गया है और जो हाशिये के लोग हैं, कम आबादी वाले लोग हैं, वे वर्चस्व बनाए हुए हैं और वही मुख्यधारा के केंद्र में हैं। जिसे आज हाशिये का समाज कहा जाता है, उसे हाशिये का समाज नहीं कहा जाना चाहिए। यह मुख्यधारा का समाज है क्योंकि बहुसंख्यक समाज है और उसकी आबादी भी बहुत ज्यादा है, देश की बहुसंख्यक आबादी को हाशिये का समाज नहीं कहा जा सकता। लेकिन स्थिति यह है कि बहुत दिनों से जो शिक्षा है, आर्थिक संसाधन है, उससे वंचित करके उन्हें एक प्रकार से हाशिये पर ढकेल दिया गया है। उस पर पढ़े–लिखे वर्चस्वशाली लोग आधिपत्य जमा चुके हैं, तो हाशिये के समाज को नए ढंग से सोचने की जरूरत है।"2

वास्तव में हाशिये का जीवन उन लोगों का होना चाहिए, जो संख्या में कम हैं। दरअसल बहुजनों की संख्या ज्यादा तो है किन्तु वे सत्ता में नहीं आ पाये, इसी वजह से बहुजन आज हाशिये पर जी रहे हैं। जिसकी सत्ता होती है, नियम–कानून उसी के

Scanned by CamScanner

चलते हैं क्योंकि जो समाज सर्वगुण सम्पन्न हो, सभी पर उसी के बनाए हुए कानून लागू होते हों, वही मुख्यधारा का समाज है। आज के समय में बहुजन समाज के पास सत्ता नहीं है, वह खंड–खंड में बिखरा है, जिसकी वजह से हाशिये की जिंदगी जीने पर मजबूर है । चौथीराम यादव लिखते हैं "दलितों, आदिवासियों, स्त्रियों, किसानों, मजदूरों व अन्य बहिष्कृत जाति समुदायों की उपेक्षा कर क्या किसी राष्ट्रवाद की कल्पना की जा सकती है ? जिसे हाशिए का समाज कहा जाता है, बहुसंख्यक आबादी वाला वही समाज मुख्यधारा का समाज है, जिसे शैक्षिक और आर्थिक अधिकारों से वंचित कर हाशिए पर फेंक दिया गया है।"3

'साहित्य समाज का दर्पण है' जब हम इस परिभाषा को पढ़ते हैं, तो वास्तव में समाज और साहित्य का एक अटूट संबंध दिखायी देता है, किन्तु हिंदी साहित्य के इतिहास की पड़ताल करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक हमें समाज के सिर्फ एक तबके का चेहरा दिखायी देता है, वह भी मुख्यधारा का ही। समाज की आधारशिला या उसकी नींव जिस पर टिकी है, वह हाशिये का समाज है। इस हाशिये के समाज के अन्तर्गत 'दलित, आदिवासी, स्त्री, मजदूर, ट्रान्सजेण्डर इत्यादि वर्ग भी आते हैं किन्तु साहित्य के इतिहास में इनकी खोज खबर बहुत कम ली गयी। मुख्यधारा के साहित्य ने इन तबके की पूरी तरह से उपेक्षा की।

हिंदी साहित्य में अस्मितामूलक विमर्श के आगमन से समाज के हाशिये पर जीवन बिताने वाले दलित, आदिवासी, स्त्री, मजदूर और ट्रान्सजेण्डर इत्यादि ने अपनी अस्मिता और अस्तित्व को लेकर पहल की है। वे अपना साहित्य भी लिखने लगे हैं और समाज में अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत भी हैं। राष्ट्र की कल्पना हम किसी एक समुदाय से नहीं कर सकते। सभी मनुष्यों को समेटते हुए ही कोई राष्ट्र सार्थक हो सकता है। इस मुद्दे को लेकर प्रो. चौथीराम यादव अपनी चिंता जाहिर करते हैं, "भारतीय राष्ट्र की पुनर्व्याख्या करने से पहले हाशिए के समाज पर विचार कर लेना आवश्यक प्रतीत होता है। हाशिए के समाज में दलित, आदिवासी, स्त्रियां, किसान, मजदूर आदि की गणना की जाती है, जिनकी आबादी कुल आबादी की तीन चौथाई होती है। इसके साथ की स्त्रियों को आधी आबादी कहलाने का प्रचलन भी है। यह बहुसंख्यक आबादी वाला समाज ही राष्ट्र की मुख्यधारा है जिसे अलगाववादी समाज व्यवस्था में शिक्षा सत्ता–संस्कृति और आर्थिक संसाधनों से वंचित कर हाशिए पर ढकेल दिया गया है। राष्ट्र निर्माण और राष्ट्र के आर्थिक विकास में इन्हीं की महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं।"4

चौथीराम यादव हाशिए की जिन्दगी जी रही महिलाओं के शोषण का जिम्मेदार भारतीय समाज व्यवस्था को मानते हैं। ब्राह्मणवादी व्यवस्था में आज मुख्यधारा के लोग हैं, वे इसके मुख्य जिम्मेदार हैं। पुरुष समाज में स्त्रियों के लिए क्या जगह है, इस प्रश्न को उठाते हुए चौथीराम यादव लिखते हैं कि "आखिर यह कैसी भारतीय संस्कृति जिसमें पुरुषों के लिए उन्मुक्त यौनाचार की छूट हो और इसे शर्मनाक ढंग से उनके पौरुष का प्रतीक घोषित कर दिया जाए। इसके उलट यदि कोई स्त्री पर पुरुष की ओर आँख उठाकर देख भर ले तो गर्दन काट लेने का विधान रचा जाए।"5

चौथीराम यादव अपने आलोचना कर्म में पीछे छूट गए उन पक्षों को सामने लाते है, जहाँ तक हिंदी की सवर्णवादी बहुरंगी आलोचना दृष्टि या तो पहुँच न सकी या इसने पहुँचने की कोशिश नहीं की। प्रो. चौथीराम यादव का स्थान उन आलोचकों में से है, जो सदियों से प्रचलित ढर्रे, मान्यताओं से हटकर कुछ करना चाहते हैं। प्रो. यादव की लेखनी हाशिये पर जबरन धकेल दिये गए समाज के उद्धार के लिए कटिबद्ध है।

आज के समय में दलित साहित्य का पूरा विपुल साहित्य हमारे सामने है। दलितों व हाशिये के समाज की आवाज को अब अनसुना नहीं किया जा सकता। इसका मूल दर्शन मानवतावादी दर्शन है। मराठी से शुरू होकर हिंदी साहित्य में आकर यह एक मील का पत्थर बन चुका है। दलित साहित्य का अपना खुद का सौंदर्यशास्त्र लिखा जा चुका है। दलित साहित्य मानव को मानव के रूप में देखने का हिमायती है। दलित साहित्य का मूल स्थायित्व कबीर, ज्योतिबा फुले व अंबेडकर के साहित्यिक दर्शन में है। नवजागरण का समय हो या पुनर्जागरण का बहुजन नायकों का योगदान सभी जगह था। हिंदी पट्टी के नवजागरण के समय भी बहुत से दलित संत, कवियों ने अपनी रचनाओं से योगदान दिया लेकिन इस सवर्णवादी बहुरंगी आलोचना ने उनकी नोटिस लेना उचित नहीं समझा। हिंदी नवजागरण में अछूतानन्द हरिहर, शाहू जी महाराज, पेरियार के योगदान को हम कैसे भूल सकते हैं। अछूतानन्द हरिहर की रचनाओं को अभिजन समाज के प्रेस छापने से कतराते थे। अछूतानन्द हरिहर के योगदान की ओर इंगित करते हुए चौथीराम यादव लिखते हैं कि स्वामी अछूतानन्द की कृतियों में मायानंद बलिदान, रामराज्य न्याय, आदिवंश का डंका आदि ऐसे महत्वपूर्ण ग्रंथ हैं जिनका व्यापक प्रभाव समुदाय दलित समुदाय पर पड़ा था।

वास्तव में चौथीराम यादव उत्पीड़ितों के लिए नए 'आलोचना शास्त्र' का निर्माण कर रहे हैं। यह एक अलग आलोचना विमर्श है, जिसे आज तक की बहुरंगी हिंदी आलोचना ने अस्पृश्य और गैरजरूरी मान लिया था। चौथीराम यादव हिंदी के ऐसे पक्षों को अपने आलोचना के माध्यम से सामने लाते हैं, जिनको पढ़कर लगता है कि इन पक्षों पर तो बहुत पहले ही सवाल उठाया जाना चाहिए था, फिर अभी तक हिंदी आलोचना मौन क्यों थी ? वास्तव में प्रो. यादव लीक से हटकर चलने वाले लोकधर्मी आलोचक हैं। किसी भी रचना की प्राचीनता, आधुनिकता तथा सामाजिकता एवं गहनता तथा व्यापकता को केन्द्र में रखकर किसी भी रचना के समस्त पक्ष को देखकर ही वे रचना की आलोचना करते हैं। सूर्यनारायण रणसुभे लिखते हैं कि "संभवतः चौथीराम यादव पहले समीक्षक हैं, जो दलित प्रश्न की ऐतिहासिक जड़ों को खोजते हुए हिंदी साहित्य के इतिहासकारों के सम्मुख दर्जनों प्रश्न उपस्थित कर उनके वर्णवादी चरित्र को उजागर करते हैं।"6

भक्तिकाल में आते ही सामंती आलोचना अपना असली रूप दिखने लगती है। तुलसीदास को हिंदी जगत का गौरव

घोषित कर दिया वहीं दूसरी तरफ अन्य कवियों पर ध्यान ही नहीं दिया गया जबकि उनकी रचनाओं में अपने समय का यथार्थ, सामाजिकता आदि पूरे क्रांति के साथ आते हैं। इस संदर्भ में प्रो. चौथीराम यादव लिखते हैं, "यदि तुलसीदास हिंदी जाति के गौरव हैं तो मध्यकालीन लोकजागरण के उन्नायक कबीर क्यों नहीं ? यदि हिन्दू आस्था का प्रतीक काशी विश्वनाथ मंदिर भी हिंदी प्रदेश का गौरव है तो उसी के बगल में बौद्धों की आस्था का केंद्र सारनाथ क्यों नहीं ? वह अतिरंजित कल्पना करते हैं कि यदि हिंदी प्रदेश का निर्माण हो गया तो वह एशिया का मुंह उज्ज्वल करेगा, लेकिन इस ऐतिहासिक सच्चाई को भूल जाते हैं कि बहुत पहले ही एशिया का मुंह उज्ज्वल करने वाले गौतम बुद्ध भी इसी हिंदी प्रदेश के गौरव हैं।"7

संदर्भ

1. कृष्ण, प्रो. वी. कृष्ण सिंह, डॉ. भीम, आदिवासी विमर्श, पृष्ठ संख्या 14
2. साक्षात्कार, आलोचक चौथीराम यादव, दिनेश पाल और दीपक कुमार के साथ बातचीत, अपनी माटी पत्रिका, दलित आदिवासी विशेषांक, अंक १६, सितंबर–नवंबर २०१५
3. यादव, चौथीराम. (2014). उत्तरशती के विमर्श और हाशिये का समाज. नई दिल्ली : (अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा) लिमिटेड). पृष्ठ संख्या १३
4. वही, पृष्ठ संख्या 15
5. वही, पृष्ठ संख्या 30
6. थापा, सूरज बहादुर. (सं.). (2016). जब जब देखा लोहा देखा. नई दिल्ली : (अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा) लिमिटेड). पृष्ठ संख्या 25